अध्यात्म ज्ञान एवं चिन्तन संस्था

(SOCIETY FOR ADHYATMA STUDIES)

17, सिविल लाइन्स, कमिश्नर ऑफिस के सामने, मुरादाबाद – 244001
मो0 9412241221

ब्रह्म ज्ञान विचार गोष्ठी – 49

22.04.2012

"ब्रह्म सत्य जगत मिथ्या"

निवेदक

डॉ0 यू0 के0 शाह
शाह नर्सिंग होम,
सिविल लाइन्स, मुरादाबाद
फोन नं0 9359716440

रविन्द्र नाथ कत्याल
अमर बसेरा,
सिविल लाइन्स, मुरादाबाद
फोन नं0 9837041945

सुधीर गुप्ता, एडवोकेट
17, सिविल लाइन्स,
मुरादाबाद
फोन नं0 9412241221

ब्रह्म सत्य जगत मिथ्या

ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या।
जीवो ब्रह्मैव नापरः ।।

यह सिद्धांत वाक्य आदि शंकराचार्य द्वारा उपनिषदों का भाष्य करते समय दिया गया। इसका अर्थ है कि केवल ब्रह्म ही सत्य है बाकी सम्पूर्ण जगत मिथ्या है। जीव और ब्रह्म में कोई अन्तर नही है।

ब्रह्म सत्य जगत मिथ्या का एक अर्थ यह है कि ब्रह्म सनातन, कभी न नष्ट हाने वाला है तथा जगत नश्वर है जिसमें समस्त प्राणी व वस्तुयें नाशवान है तथा एक समय बाद न"ट हो जाने वाले हैं।

दूसरा अर्थ यह है कि केवल ब्रह्म का ही अस्तित्व है बाकी सब माया है – स्वप्न है जिसका अपना अस्तित्व नही है। यदि इस अर्थ को ले तब यह प्रश्न उठता है कि यह जो सम्पूर्ण दृश्यमान जगत है, ये जो विभिन्न प्राणी, जीव जन्तु चलते फिरते दृ"टीगोचर होते है, ये जो विभिन्न प्रकार के पेड़ पौधे, आकाश, समुद्र, नदिया आदि दिखायी पड़ते है, ये सब क्षूठ कैसे हैं, ये सब स्वप्न कैसे है। ऐसा लगता है कि पहला अर्थ ही ठीक है। यह विचारणीय है कि विभिन्न उपनि"kदो तथा दर्शन शास्त्रो में जीवन यापन के विभिन्न मार्ग बताये गये है। बहुत से शास्त्रो में विद्याध्ययन के पश्चात गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए सन्तान उत्पŸिk, धनोपार्जन, एश्वर्य–वृद्धि करते हुए जीवन व्यतीत करना तथा जीवन के अन्तिम समय में सन्यास के लिये कहा गया है। सभी में यह अवश्य कहा गया है कि हमारा जीवन सत् हो असत् नही, अर्थात हम सही प्रकार धर्म का पालन करते हुए जीवन यापन करें। क्षूठ न बोले, किसी को धोखा न दें, अधर्म से धन न कमायें आदि। इसका अर्थ यह है कि जगत मिथ्या अथवा असत्य या केवल स्वप्न नही है बल्कि प्रत्यक्ष है, सच है। हम जीवन से ऑखे बन्द नही कर सकते है।

आदि शंकराचार्य

जीवन परिचय –

आदि शंकराचार्य का जन्म ईस्वी सन् 788 में केरल में हुआ और 32 वर्ष की आयु में 820 ईस्वी में केदारनाथ में उन्होने निर्वाण प्राप्त किया। बालपन में उनका जन्म का नाम शंकर था और बालपन से ही वह अत्यन्त विद्वान थे तथा वेदो तथा उपनिषदो के अध्ययन में अत्यन्त रुचि रखते थे। कहा जाता है कि जब उन्होने 7 वर्ष में सन्यास लेने की बात अपनी माता आर्यम्बा से कही तो वे तैयार नहीं हुईं। एक दिन शंकर पूर्णा

नदी पर नहाने गये तब एक घड़ियाल ने उनका पैर पकड़ लिया तब शंकर ने अपनी मां से कहा कि अगर आप मुझे सन्यासी बनने की आज्ञा दे देंगी तो यह घड़ियाल मुझे छोड़ देगा जिस पर मां ने अपनी सहमति दे दी और घड़ियाल ने शंकर को छोड़ दिया। कहा जाता है कि कोई भी घड़ियाल उससे पहले व बाद में कभी भी उस पूर्णा नदी में दिखाई नही दिया। इसके बाद शंकर ने धर छोड दिया और गुरु की खोज में उत्तर की ओर चल दिये। नर्मदा नदी के किनारे ओंकारेश्वर में उन्हे गोविन्द भगवतपाद मिले। वे शंकर के ज्ञान से अति प्रसन्न हुए और उन्हे अपना शिष्य बना लिया। उनके प्रेरित करने पर शंकर ने ब्रह्म सूत्र पर भाष्य लिखा फिर वे बनारस के लिये चले। जब शंकर बनारस में विश्वनाथ मंदिर की ओर जा रहे थे तब उन्हे सामने से एक चांण्डाल चार कुत्तों के साथ आता हुआ दिखाई दिया। जब शंकर ने उससे हटने के लिये कहा तब उस चांण्डाल ने कहा कि क्या तुम चाहते हो कि मैं अपने अविनाशी आत्मा को हटाऊं या इस हाड़–मांस के बने शरीर को हटाऊं। तुरन्त ही शंकर समझ गये कि वह चांण्डाल और कोई नही बल्कि साक्षात शिव हैं और वह चार कुत्ते चार वेद हैं। शंकर उन्हे दण्डवत करने के लिये भूमि पर लेट गये और जब वह उठे तब तक वह चांण्डाल और कुत्ते अदृश्य हो गये थे।

आदि शंकराचार्य ने दक्षिण से उत्तर और पूर्व से पश्चिम तक पूरे भारत की यात्रायें की। उस समय भारत वर्ष में हिन्दू धर्म के विभिन्न मतो – मीमांसा, सांख्य, बौद्धं, जैन आदि विचार धाराये अधिक प्रचलित थी। शंकराचार्य ने उक्त सिद्धातो के विद्वानो के साथ शास्त्रार्थ करके अद्वैत वेदान्त को सर्वोपरि सिद्ध किया तथा पूरे भारत वर्ष व आस पास के देशो में अद्वैत को प्रचारित किया। उनके शास्त्रार्थ की सबसे प्रसिद्ध कथा मण्डन मिश्र के साथ उनका शास्त्रार्थ है। मण्डन मिश्र का यह विचार था कि ग्रहस्थ व्यक्ति का जीवन सन्यासी के जीवन से अत्यधिक श्रेष्ठ है और तत्कालीन भारत में यह विचार सर्वमान्य था। कथा के अनुसार आदि शंकराचार्य महिस्मति प्रदेश (आधुनिक बिहार) में मण्डन मिश्र से शास्त्रार्थ करने गये और 15 दिन तक उनका शास्त्रार्थ चला जिसकी निर्णायक मण्डन मिश्र की पत्नि उभय भारती थीं। 15 दिन बाद मण्डन मिश्र ने अपनी हार स्वीकार कर ली। तब उभय भारती ने कहा कि शास्त्रार्थ तब तक पूरा नही माना जायेगा जब तक कि शंकर उभय भारती के साथ भी शास्त्रार्थ करें। शंकर इसके लिये तैयार हो गये। तब उभय भारती नें अन्य प्रश्नों के साथ–साथ स्त्री–पुरुष के बीच में शारीरिक सम्बंधो के बारे में प्रश्न पूछने शुरु कर दिये। यह एक ऐसा विषय था जिसके बारे में शंकराचार्य को कोई भी ज्ञान नही था क्योंकि वह वास्तविक ब्रह्मचारी थे। शंकराचार्य नें उन प्रश्नों का उत्तर देने के लिये 15 दिन का समय मांगा और परकाया प्रवेश विद्या के द्वारा अपने शरीर को छोड़कर एक हाल ही में मृत हुये राजा के शरीर में प्रवेश कर लिया जिससे राजा का वह शरीर जीवित हो गया। उसकी दो रानियों के साथ सहवास करके शंकर ने काम–कला के बारे में समस्त ज्ञान अर्जित कर लिया। वह रानियां अपने राजा के पुनर्जीवित शरीर में इतना अधिक पुरुषत्व देखकर

अत्यन्त प्रसन्न थीं और उन्होने यह विचार किया कि इस शरीर में वह राजा नही है बल्कि कोई और है। और उन्होने अपने सिपाहियों को चारो ओर भेजा कि कहीं भी किसी साधु का मृत शरीर पड़ा मिले तो उसे तुरन्त चिता में रखकर अन्तिम संस्कार कर दिया जाये ताकि उस राजा के शरीर में प्रवेश करने वाला व्यक्ति उनके साथ बहुत समय तक रह सके। रानी के सिपाही ढूंढते हुये शंकर के पार्थिव शरीर तक पहुंचे और उसे उठाकर चिता पर रखकर अग्नि प्रज्ज्वलित करने ही वाले थे कि शंकर वापिस अपने शरीर में आ गये और एक दम चिता पर उठकर बैठ गये। उसके बाद शंकर ने उभय भारती के समस्त प्रश्नों का उत्तर दिया जिस पर उभय भारती ने भी अपनी हार स्वीकार कर ली और शास्त्रार्थ के नियमों के अनुसार मण्डन मिश्र को सन्यास लेने की अनुमति दे दी।

अद्वैत दर्शनः

अद्वैत का अर्थ है जहां द्वैत न हो अर्थात जहां दो न हो या दो का भाव न हो जहां आत्मा और ब्रह्म अलग–अलग न हो बल्कि एक ही हों। अद्वैत दर्शन के अनुसार केवल ब्रह्म ही है और ब्रह्म के अतिरिक्त कुछ भी नही है। केवल ब्रह्म ही अनादि और अनन्त है और अपरिवर्तनीय है, ब्रह्म के अतिरिक्त बाकी सब जगत उत्पन्न होने वाला व समाप्त होने वाला है। जिस प्रकार समुद्र के बिना लहरो का कोई अस्तित्व नही है, उसी प्रकार ब्रह्म के बिना किसी भी वस्तु अथवा प्राणी का अस्तित्व नही है। केवल ब्रह्म ही सत्य है बाकी समस्त दृश्यमान जगत केवल माया है जिसका अपना कोई अस्तित्व नही है। अद्वैत का सिद्धात शास्त्रो के अध्धयन, युक्ति (तर्क), अनुभव, तथा कर्म पर आधारित है। यह दर्शन जीवन जीने का एक स्पष्ट मार्ग है। बालपन में जब शिक्षा प्रारम्भ होती है तभी से इस दर्शन को समझने तथा उस मार्ग पर मृत्यु पर्यन्त चलने की आवश्यकता है। इस दर्शन को 4 सूत्रो द्वारा वर्णित किया गया है

1. एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति
2. स एव आत्मा
3. तत् त्वमसि
4. सौऽहम्

अर्थात केवल ब्रह्म का ही अस्तित्व है अन्य किसी का भी नही, वही आत्मा है, वही तुम हो, वही मै हूँ।

आदि शंकराचार्य ने 11 उपनि"ादों के साथ भगवत गीता और ब्रह्म सूत्र पर भाष्य लिखे और इन्ही तीनो को प्रस्थानत्रयी कहा गया। उपनिषदो में मुख्यतः केवल ब्रह्म के अस्तित्व को ही माना गया है। वही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को जीवित रखने वाली शक्ति है। वह कण – कण में व्याप्त है। उसका कोई आकार नही है। उसके बिना अन्य किसी का भी कोई अस्तित्व नही है। अद्वैत के इस सिद्धात में धार्मिक कर्मकाण्ड का कोई महत्व नही है बल्कि सबसे अधिक ज्ञान का महत्व है। और फिर उस ज्ञान को जीवन के हर क्षण में उतारने का महत्व है। शंकर ने योग को मोक्ष का सीधा रास्ता मानने से इनकार किया उनका कहना है कि योग द्वारा जो मानसिक स्थिति प्राप्त होती है वह ब्रह्म को प्राप्त करने में सहायक हो सकती है परन्तु केवल उससे ब्रह्म की प्राप्ति नही की जा सकती। शंकर के अनुसार ब्रह्म का ज्ञान तभी प्राप्त हो सकता है जब उपनिषदो में लिखे हुए शब्दों को समझ कर उनका मनन किया जाये और उनके अनुसार जीवन–यापन किया जाये।

तत्कालीन समय में भारत वर्ष में बौद्ध और जैन धर्म अधिक प्रचलित थे और हिन्दू धर्म के विभिन्न मतो मीमांसा दर्शन, साख्य दर्शन, वैशेषिक दर्शन, चार्वाक दर्शन आदि का अधिक प्रचार था जिनके अनुसार ब्रह्म और जीव तथा प्रकृति सभी के अस्तित्व को माना जाता है। ऐसी स्थिति में शंकराचार्य के सामने एक बड़ी चुनौती इन विभिन्न विद्वानो का सामना करने की थी। शंकराचार्य ने शास्त्रार्थों के द्वारा उन विभिन्न धर्मावलम्बियों को अपने तर्को से जीता और अद्वैत दर्शन को सर्वोच्च सिद्ध किया उनको प्रयत्नो से वेद और उपनिषद के अनुयायी बढे और उन्होने भारतवर्ष के चार कोनो में चार मठो की स्थापना की। उनके द्वारा दशनामी सम्प्रदाय प्रारम्भ किया गया।

शंकर का मानना है कि ईश्वर की भक्ति अध्यात्म ज्ञान का एक आवश्यक मार्ग है। उनके द्वारा संदेश दिया गया – "भज गोविन्दम् भज गोविन्दम् भज गोविन्दम् मूढ मते"। उनका मानना है कि ईश्वर को प्राप्त करने के लिये गुरु का होना अत्यन्त आवश्यक है। उनके द्वारा "गुरुस्तोत्र" लिखा गया जिसका प्रारम्भ ही गुरु की महत्ता से हुआ है –

गुरुर्ब्रह्म गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः।।

उनकी प्रसिद्ध पुस्तक विवेक चूड़ामणि है।

****